रतन सुत्त

यानीध भूतानि समागतानि, भुम्मानि वा यानि व अन्तळिक्खे ।
सब्बे' व भूता सुमना भवन्तु, अथो 'पि सक्कच्च सुणन्तु भासितं ॥१ ॥

तस्मा हि भूता निसामेथ सब्बे, मेत्तं करोथ मानुसिया पजाय ।
दिवा च रत्तो च हरन्ति ये वलिं, तस्मा हि ने रक्खथ अप्पमत्ता ॥२ ॥

यं किञ्चि वित्तं इध वा हुरं वा, सग्गेसु वा यं रतनं पणीतं ।
न नो समं अत्थि तथागतेन, इदम्पि बुद्धे रतनं पणीतं ।
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥३ ॥

खयं विरागं अमतं पणीतं, यदज्झगा सक्यमुनी समाहितो ।
न तेन धम्मेन समत्थि किञ्चि, इदम्पि धम्मे रतनं पणीतं
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥४ ॥

यं बुद्धसेट्ठो परिवण्णयी सुचिं, समाधिमानन्तरिकञ्ञमाहु ।
समाधिना तेन समो न विज्जति, इदम्पि धम्मे रतनं पणीतं ।
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥५ ॥
ये पुग्गला अट्ठ सतं पसत्था, चत्तारि एतानि युगानि होन्ति ।
ते दक्खिणेय्या सुगतस्स सावका, एतेसु दिन्नानि महप्फलानि ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥६ ॥
ये सुप्पयुत्ता मनसा दळ्हेन, निक्कामिनो गोतमसासनम्हि ।
ते पत्तिपत्ता अमतं विगय्ह, लद्धा मुधा निब्बुतिं भुञ्जमाना ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥७ ॥
यथिन्दखीलो पठविं सितो सिया, चतुब्भि वातेहि
असम्पकम्पियो ।
तथूपमं सुप्परिसं वदामि, यो अरियसच्चानि अवेच्च पस्सति ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥८ ॥
ये अरियसच्चानि विभावयन्ति, गम्भीरपञ्ञेन सुदेसितानि ।
किञ्चापि ते होन्ति भुसप्पमत्ता, न ते भवं अट्ठमं आदियन्ति ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥९ ॥

सहावऽस्स दस्सनसम्पदाय, तयस्सु धम्मा जहिता भवन्ति ।
सक्कायदिट्ठि विचिकिच्छितं च, सीलब्बतं वा' पि यदत्थि
किञ्चि ॥१० ॥
चतूहपायेहि च विप्पमुत्तो, छ चाभिठानानि अभब्बो कातुं ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥११ ॥
किञ्चापि सो कम्मं करोति पापकं कायेन वाचा उद चेतसा वा ।
अभब्बो सो तस्स पटिच्छादाय, अभब्बता दिट्ठपदस्स वुत्ता ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥१२ ॥
वनप्पगुम्बे यथा फुस्सितग्गे, गिम्हानमासे पठमस्मिं गिम्हे ।
तथूपमं धम्मवरं अदेसयि, निब्बाणगामिं परमं हिताय ।
इदम्पि बुद्धे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥१३ ॥

वरो वरञ्ञू वरदो वराहरो, अनुत्तरो धम्मवरं अदेसयि ।
इदम्पि बुद्धे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥१४॥
खीणं पुराणं नवं नत्थि सम्भवं, विरत्तचित्ता आयतिके भवस्मिं ।
ते खीणबीजा अविरूळ्हछन्दा, निब्बन्ति धीरा यथायम्पदीपो ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं, एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥१५॥
यानीध भूतानि समागतानि, भुम्मानि वा यानि व अन्तळिक्खे ।
तथागतं देवमनुस्सपूजितं, बुद्धं नमस्साम सुवत्थि होतु ॥१६॥
यानीध भूतानि समागतानि, भुम्मानि वा यानि व अन्तळिक्खे ।
तथागतं देवमनुस्सपूजितं, धम्मं नमस्साम सुवत्थि होतु ॥१७॥
यानीध भूतानि सभागतानि, भुम्मानि वा यानि व अन्तळिक्खे ।
तथागतं देवमनुस्सपूजितं, संघं नमस्साम सुवत्थि होतु ॥१८॥

रतन सूत्र

(इस सुत्त की देशना भगवान् ने वैशाली में की थी जब कि वैशाली की जनता दुर्भिक्ष, रोग और अमनुष्यों से पीड़ित थी। इसमें बुद्ध, धर्म और संघ के गुण वर्णित हैं।)

इस प्रकार पृथ्वी पर या आकाश में जितने भी प्राणी उपस्थित हैं, वे सभी प्रसन्न हों और हमारे इस कथन को आदरपूर्वक सुनें ॥१॥

इसलिए सभी प्राणी सुनें। मनुष्य मात्र के प्रति मैत्री करें, ज्यो कि वें दिन-रात उनका प्रतिपालन करते हैं, और इसलिए अप्रमत्त होकर उनकी रक्षा करें ॥२॥

इस लोक या परलोक में जो भी धन है अथवा स्वर्गों में जों उत्तम रत्न है, उनमें से कोई भी बुद्ध के समान (श्रेष्ठ) नहीं है; यह भी बुद्ध में उत्तम रत्न है - इस सत्य वचन से कल्याण हो ॥३॥

जिस उत्तम अमृत, विराग(-पद) और सभी दोषों के नाशक निर्वाण को एकाग्र होकर शाक्यमुनि ने प्राप्त किया, उस धर्म के समान दूसरा कुछ श्रेष्ठ नहीं है। यह भी धर्म में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥४॥

परम श्रेष्ठ भगवान् बुद्ध ने जिस पवित्र समाधि का तत्काल फलदायी बतलाया, उस समाधि के समान दूसरा कुछ श्रेष्ठ नहीं है। यह भी धर्म में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥५॥

जो बुद्धों द्वारा प्रशंसित आठ प्रकार के व्यक्ति हैं, इनके चार जोडे होते हैं, वे बुद्ध के शिष्य दक्षिणा देने के योग्य हैं, इन्हें दान देने में महाफल होता है। यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥६॥

जो गौतम बुद्ध के शासन में तृष्णा-रहित हो दृढमन से संलग्न है, वे प्राप्तव्य को प्राप्तकर अमृत में पैठ श्रेष्ठत्व को पा विमुक्ति-रस का आस्वादन करते हैं। यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥७॥

जैसे भूमि में गडी इन्द्रकील चारों ओर की हवा से भी कँपती नहीं है, वैसे ही मैं सत्पुरूष को कहता हूँ, जो कि आर्यसत्यों को भली प्रकार ज्ञानपूर्वक दर्शन करता है। यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥८॥

जो गम्भीर प्रज्ञा वाले बुद्ध द्वारा उपदिष्ट आर्यसत्यों का मनन करते हैं वे चाहे भले ही एकदम प्रमाद में पड़े हुए हों, किन्तु आठवाँ जन्म ग्रहण

नहीं करते । यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥९ ॥

दर्शन-प्राप्ति के साथ ही साथ उसके तीन बन्धन छूट जाते हैं- सत्काय-दृष्टि, विचिकित्सा, शीलव्रत परामर्श अथवा अन्य जो कुछ भी बन्धन हों । वह चार अपायों से मुक्त हो जाता है । छः घोर पाप-कर्मों का कभी आचरण नहीं करता । यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥१० ॥

भले ही वह शरीर, वचन अथवा मन से पाप-कर्म करता है, किन्तु वह उसे कभी छिपा नहीं सकता, क्योंकि निर्वाणदर्शी को छिपाने में असमर्थ कहा गया है ।यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥११ ॥

जैसे वसन्त ऋतु के प्रारम्भ में वन और झाडियाँ पुष्पित हो उठती हैं, वैसे ही श्रेष्ठ धर्म का उपदेश भगवान बुद्ध ने दिया, जो निर्वाण की ओर ले जाने वाला तथा परम हितकारी है ।यह भी बुद्ध में उत्तम रत्न है - इस सत्यवंचन से कल्याण हो ॥१२ ॥

श्रेष्ठ निर्वाण के दाता, श्रेष्ठ धर्म के ज्ञाता, श्रेष्ठ मार्ग के निर्देशक, श्रेष्ठ लोकोत्तर बुद्ध ने उत्तम धर्म का उपदेश दिया है ।यह भी बुद्ध में

उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥१३॥

सारा पुराना कर्म क्षीण हो गया, नया उत्पन्न नहीं होता, उनका चित्त पुनर्जन्म से विरक्त हो गया है, वे क्षीण-बीज हो गए हैं, उनकी तृष्णा समाप्त हो गई है, वे इस प्रदीप के समान निर्वाण को प्राप्त हो जाते हैं ।यह भी संघ में उत्तम रत्न है - इस सत्यवचन से कल्याण हो ॥१४॥

इस समय इस पृथ्वी पर या आकाश में जितने भी प्राणी उपस्थित हैं,तथागत उन सभी देव और मनुष्यों से पूजित हैं, हम बुद्ध को नमस्कार करते हैं, कल्याण हो ॥१५॥

इस समय इस पृथ्वी पर या आकाश में जितने भी प्राणी उपस्थित हैं,तथागत उन सभी देव और मनुष्यों से पूजित हैं, हम धर्म को नमस्कार करते हैं, कल्याण हो ॥१६॥

इस समय इस पृथ्वी पर या आकाश में जितने भी प्राणी उपस्थित हैं,तथागत उन सभी देव और मनुष्यों से पूजित हैं, हम संघ को नमस्कार करते हैं, कल्याण हो ॥१७॥

- रतनसुत्त समाप्त ।